International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 15 Issue 5 || May 2026 || PP. 135-139

मत्स्यपुराण एवं भविष्यपुराण में मन्दारसप्तमी तथा मन्दारषष्ठी व्रत का तुलनात्मक एवं पाठालोचनात्मक अध्ययन

कविता

संस्कृत पालि एवं प्राकृत विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक,124001

सारांश

मन्दारव्रत के विषय में मत्स्यपुराण और भविष्यपुराण को साथ रखकर पढ़ने पर एक रोचक स्थिति सामने आती है। मत्स्यपुराण के अध्याय ७९ में इसका नाम मन्दारसप्तमी है, जबकि भविष्यपुराण के उत्तरपर्व के अध्याय ४० में मन्दारषष्ठी कहा गया है। नाम अलग हैं, लेकिन व्रत की तैयारी, उपवास, सूर्यपूजन और दान की विधियों में पर्याप्त समानता है। यह आलेख पहले दोनों प्रकरणों में दिए गए अनुष्ठान-क्रम को समझता है और फिर उन पदों की तुलना करता है जिनमें वास्तविक अंतर मिलता है। विशेष ध्यान तिथियों, सूर्य के नामों, प्रार्थना और फलश्रुति पर है। अध्ययन प्रकाशित तथा डिजिटल रूप में उपलब्ध पाठों पर आधारित है; पाण्डुलिपियों का प्रत्यक्ष संपरीक्षण इसमें नहीं किया गया है।

मुख्य शब्द: मत्स्यपुराण, भविष्यपुराण, मन्दारसप्तमी, मन्दारषष्ठी, सूर्योपासना, व्रतविधान, पाठालोचना।

१. प्रस्तावना

पुराणों में व्रतविधान का वर्णन पढ़ते समय उसके धार्मिक उद्देश्य के साथ उसकी रचना-पद्धति पर भी ध्यान देना पड़ता है। व्रती कब भोजन करेगा, किस दिन उपवास रखेगा, पूजा में किन वस्तुओं का उपयोग होगा और अंत में किसे दान दिया जाएगा, इन बातों को ग्रंथ निश्चित क्रम में रखता है। यह क्रम पाठ की पहचान करने में सहायक है। यदि दो पुराणों में व्रत के शीर्षक बदल जाएँ, तब भी उन ग्रंथों के भीतर बताई गई क्रियाओं का मिलान करके उनके संबंध की जाँच की जा सकती है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०)।

मन्दारव्रत इसका अच्छा उदाहरण है। एक ओर मत्स्यपुराण का मन्दारसप्तमी नाम है और दूसरी ओर भविष्यपुराण का मन्दारषष्ठी। नामों को अलग-अलग देखने पर दो स्वतंत्र व्रतों का आभास होता है। किंतु दोनों अध्यायों में पंचमी के भोजन-संयम से प्रारंभ होकर षष्ठी के उपवास तथा सप्तमी के सूर्यपूजन तक पहुँचने वाला क्रम मिलता है। यही बात एक प्रश्न उठाती है: क्या नामभेद दो विधियों का प्रमाण है, अथवा एक ही अनुष्ठान के अलग चरणों को प्रमुखता देने का परिणाम? (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक २–१०; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक २–९)।

इस प्रश्न का उत्तर ग्रंथों के शब्दों से ही खोजने का प्रयास किया गया है। वर्तमान लोकव्यवहार या बाद की पूजा-पद्धतियों को बिना प्रमाण इन अध्यायों पर आरोपित नहीं किया गया है। इसी प्रकार व्रतफल की धार्मिक घोषणा को आधुनिक ऐतिहासिक तथ्य की तरह स्वीकार करने के बजाय उसे पुराण की फलश्रुति के रूप में पढ़ा गया है।

२. शोध-समस्या, उद्देश्य और परिकल्पना

शोध की केंद्रीय समस्या व्रत के नाम और उसके वास्तविक तिथिक्रम के बीच संबंध स्पष्ट करना है। भविष्यपुराण के शीर्षक में षष्ठी महत्त्वपूर्ण है, फिर भी उसमें आगे प्रत्येक मास की सप्तमी पर पुनरावृत्ति का निर्देश मिलता है। मत्स्यपुराण सप्तमी का नाम लेता है, लेकिन षष्ठी के उपवास को समान रूप से स्थान देता है। इसलिए केवल शीर्षक के आधार पर निष्कर्ष देना पर्याप्त नहीं होगा (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक २ एवं १०; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक २ एवं ९)।

अध्ययन में चार प्रश्नों पर विचार किया गया है। दोनों प्रकरणों का सामान्य अनुष्ठान-क्रम कितना मिलता है? किस स्थान पर वास्तविक शब्दभेद है? सूर्य के नाम और प्रार्थना के भिन्न पद किस प्रकार अर्थ बदलते हैं? तथा दान, संयम और फलश्रुति की संरचना से व्रत के धार्मिक-सामाजिक स्वरूप के बारे में क्या समझ बनती है? इन प्रश्नों के उत्तर उपलब्ध पाठ की सीमा में रखे गए हैं।

प्रारंभिक धारणा यह है कि मन्दारसप्तमी और मन्दारषष्ठी अत्यंत निकट व्रतपरंपराओं के पाठ हैं। समानता से साझा परंपरा की संभावना बनती है, लेकिन अभी यह तय नहीं किया जा सकता कि किस ग्रंथ ने दूसरे से पाठ ग्रहण किया। इसके लिए अधिक पाठ-साक्ष्य आवश्यक होंगे।

३. स्रोत-सामग्री और शोध-पद्धति

प्राथमिक आधार मत्स्यपुराण, अध्याय ७९ के पंद्रह श्लोकों का उपलब्ध संस्कृत पाठ और भविष्यपुराण, उत्तरपर्व, अध्याय ४० का संस्कृत पाठ है। मत्स्यपुराण के लिए चौखम्बा विद्याभवन के १९५४ संस्करण पर आधारित ग्रेटिल-व्युत्पन्न इलेक्ट्रॉनिक पाठ को प्रमुख आधार बनाया गया है; हिंदी अनुवादित पाठ से चयनित स्थलों का मिलान भी किया गया है। भविष्यपुराण के लिए विजडम लाइब्रेरी पर उपलब्ध उत्तरपर्व के चालीसवें अध्याय को देखा गया है। दोनों इलेक्ट्रॉनिक स्रोत आलोचनात्मक पाण्डुलिपि-संस्करण नहीं हैं। इसलिए यहाँ 'पाठालोचनात्मक' का आशय पाठगत भिन्नताओं की विश्लेषणात्मक पहचान है, पूर्ण पाण्डुलिपि-आधारित निर्णायक पाठ-स्थापना नहीं (मत्स्यपुराणम्, १९५४; विजडम लाइब्रेरी, २०२४; विजडम लाइब्रेरी, २०२४)।

पद्धति का पहला चरण दोनों वर्णनों से तिथिवार क्रियाओं का क्रम तैयार करना है। दूसरे चरण में नामकरण, दिशाओं से जुड़े सूर्यनाम, प्रार्थना और फलवचन की तुलना की गई है। तीसरे चरण में पाठभेदों के संभावित धार्मिक और सांस्कृतिक अर्थ पर चर्चा की गई है। अध्ययन के लिए उपलब्ध मुद्रित-आधारित और डिजिटल पाठ उपयोगी हैं, लेकिन इनके आधार पर किसी विशिष्ट क्षेत्र की जीवित परंपरा अथवा पाठ का कालक्रम निर्धारित नहीं किया जा सकता।

४. पूर्ववर्ती अध्ययन की स्थिति

सूर्यव्रतों के विषय में आधुनिक अध्ययनों में मन्दारसप्तमी का उल्लेख मिलता है। मिताली गोस्वामी ने २०१८ के अपने अध्ययन में इसे सूर्योपासना से जुड़े व्रतों के अंतर्गत रखा और मत्स्यपुराण के अध्याय ७९ का उल्लेख किया है। उस विवेचन में पद्मपुराण के एक प्रसंग से भी तुलना का संकेत है। इससे विषय की व्यापक पृष्ठभूमि समझने में सहायता मिलती है। वर्तमान आलेख का ध्यान विशेष रूप से मत्स्यपुराण और भविष्यपुराण के मन्दार प्रकरणों के वास्तविक शब्द और विधि-साम्य पर केंद्रित है (गोस्वामी, २०१८)।

द्वितीयक साहित्य का उपयोग करते समय एक उल्लेखनीय असंगति भी सामने आई। उक्त अध्ययन के ऑनलाइन सार में मन्दारसप्तमी के साथ मार्गशीर्ष मास का उल्लेख है, पर इस अध्ययन में देखे गए दोनों संस्कृत पाठ माघ का निर्देश देते हैं। इसलिए यहाँ मास के संबंध में प्राथमिक पाठ को आधार माना गया है। इस असंगति से किसी लेखक या पाठ को तुरंत अशुद्ध ठहराना उचित नहीं होगा; इसका समाधान अलग-अलग संस्करणों की जाँच से ही संभव है (गोस्वामी, २०१८; मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक २; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक २)।

५. मत्स्यपुराण में मन्दारसप्तमी का विधान

मत्स्यपुराण के ७९वें अध्याय के आरंभ में मन्दारसप्तमी को पापनाशिनी और इच्छित फल देने वाली कहा गया है। उसका नाम "मन्दारसप्तमी" के रूप में स्पष्ट किया जाता है। फिर माघ के शुक्लपक्ष की पंचमी को हल्का भोजन और षष्ठी को उपवास रखने का निर्देश आता है। रात्रि के प्रसंग में द्विजों का सत्कार तथा मन्दार से संबद्ध प्राशन-क्रिया का उल्लेख है। स्पष्ट है कि व्रत की तैयारी सप्तमी से पहले आरंभ हो जाती है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक १–३)।

इसके बाद प्रातःकाल स्नान, सामर्थ्यानुसार ब्राह्मणों को भोजन और पूजा-सामग्री का विधान मिलता है। आठ मन्दार-पुष्प, कमलधारी स्वर्णमय पुरुष-प्रतिमा तथा ताम्रपात्र में काले तिलों से बनाया गया अष्टदल कमल विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। कमल के आठ दलों पर दिशानुसार सूर्य के नाम रखे जाते हैं। मध्यभाग में स्थापित पुरुषाकार प्रतिमा को "सर्वात्मन्" कहकर संबोधित करने से सभी दिशाओं की पूजा एक केंद्रीय देवता से संबद्ध होती है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक ४–८)।

पूजन के बाद वेदज्ञ ब्राह्मण को सामग्री देने का निर्देश है। व्रती से अपेक्षा की गई है कि वह पूर्वमुख होकर, वाणी पर संयम रखते हुए, तेल और नमक से रहित आहार ले। "सप्तम्यां मासि मासि च" शब्द व्रत को प्रत्येक मास की सप्तमी पर एक वर्ष तक दोहराने का विधान प्रस्तुत करते हैं। अंत में कलश और पूजित सामग्री का दान, सामर्थ्य के अनुसार गौदान तथा सूर्य से उद्धार की प्रार्थना का उल्लेख है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक ९–१२)।

६. भविष्यपुराण में मन्दारषष्ठी का विधान

भविष्यपुराण के उत्तरपर्व के अध्याय ४० में यह विधान श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर के संवाद में प्रस्तुत होता है। "षष्ठीं मन्दारसंज्ञिताम्" पद के कारण इसका नाम मन्दारषष्ठी है। इसके बाद माघ शुक्लपक्ष की पंचमी के अल्पाहार और षष्ठी के उपवास का जो क्रम मिलता है, वह मत्स्यपुराण से बहुत निकट है। मन्दार से संबंधित रात्रिकर्म, अगले प्रातः स्नान, द्विजभोजन और पूजा में आठ पुष्पों का प्रयोग भी इसी साम्य को पुष्ट करता है (विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक १–४)।

भविष्यपुराण में भी ताम्रपात्र, कृष्णतिल और आठ पंखुड़ियों वाले कमल का उल्लेख है। दिशाओं में सूर्यनामों की व्यवस्था अधिकांशतः वैसी ही है। फिर भी पश्चिम दिशा के नाम में अंतर दिखाई देता है: यहाँ "वसुधात्रे" है और मत्स्यपुराण में "वेदधाम्ने"। अन्य अनेक नामों के समान रहने से यह एक सीमित किंतु अर्थपूर्ण पाठभेद बनता है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक ५–८; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ४–७)।

नाम मन्दारषष्ठी होने पर भी इसी अध्याय में "सप्तम्यां मासि मासि च" द्वारा मासिक सप्तमी-विधान दिया गया है। इससे साफ होता है कि शीर्षक में षष्ठी को महत्त्व मिलने के बावजूद संपूर्ण व्रत-विधि सप्तमी तक विस्तृत है। अध्याय के उत्तरार्ध में दान, संयम, संसार से पार करने की प्रार्थना और पुण्यफल की चर्चा है। अंतिम श्लोक षष्ठी के उपवास, तिलकमल में भास्करपूजन और सुरवृक्ष के पुष्पों को विशेष फल के साथ जोड़ता है (विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ९–१५)।

७. व्रत-नाम और तिथिक्रम का तुलनात्मक प्रश्न

इन दोनों व्रतों में तीन तिथियों का संबंध स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पंचमी पर भोजन की मात्रा सीमित की जाती है। षष्ठी उपवास का दिन है। सप्तमी पर पूजा तथा बाद में उसकी नियमित मासिक पुनरावृत्ति विशेष महत्त्व पाती है। इस प्रकार षष्ठी और सप्तमी को एक-दूसरे के विरोधी नाम

मानना पाठ के पूरे क्रम को अनदेखा करना होगा। संभव है कि दोनों नाम अनुष्ठान के अलग चरणों को केंद्र में रखते हों (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक २ एवं १०; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक २ एवं ९)।

मत्स्यपुराण में "सप्तमी" से सूर्यपूजा और मासिक अनुक्रम प्रमुखता पाते हैं, जबकि भविष्यपुराण की "षष्ठी" उपवास की आरंभिक तिथि को सामने रखती है। यह व्याख्या उपलब्ध क्रम से निकलती है; इसे किसी प्राचीन संपादक की घोषित मंशा नहीं माना जा सकता। दोनों विधियों को पूर्णतः अलग बताने के लिए पूजा के उद्देश्य या मुख्य अनुष्ठान में अधिक ठोस अंतर अपेक्षित होगा।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि मत्स्यपुराण में सप्तमी के आवर्तन का वाक्य और भविष्यपुराण में वही वाक्य लगभग यथावत् मिलता है। इस तथ्य से अध्ययन का केंद्र शीर्षक की एकरूपता से हटकर वास्तविक विधि की समानता पर आ जाता है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक १०; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ९)।

८. मन्दार और अष्टदल कमल का प्रतीकात्मक अर्थ

मन्दार-पुष्प की भूमिका इस विधान में केवल पुष्प अर्पित कर देने तक सीमित नहीं है। उसी के नाम पर व्रत पहचाना जाता है और उसी से पूजा की सामग्री तैयार होती है। मत्स्यपुराण के उपलब्ध पाठ में स्वर्णमय मन्दार-पुष्पों का संकेत है; भविष्यपुराण के समान प्रसंग में सामान्य मन्दार-पुष्पों का उल्लेख मिलता है। इन वर्णनों से पूजा-वस्तु के रूप और सामग्री को लेकर पाठांतर की संभावना बनती है। इसे समझने के लिए अतिरिक्त संस्करणों का मिलान आवश्यक है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक ४–५; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ३–५)।

काले तिलों का अष्टदल कमल व्रत की स्थानिक रचना को स्पष्ट करता है। आठ दिशाओं से संबद्ध आठ नामों को दलों पर और पुरुषाकार देवप्रतिमा को मध्य की कर्णिका में रखने से पूजा का एक केंद्र और परिधि बनती है। इस विन्यास की सांकेतिक व्याख्या की जा सकती है, पर पाठ में जो स्पष्ट कहा गया है और आधुनिक पाठक उससे जो अर्थ निकालता है, उनके बीच अंतर बनाए रखना चाहिए (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक ५–८; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ४–७)।

९. सूर्यनामों का विन्यास और चयनित पाठांतर

सूर्यनामों का क्रम पूर्व में भास्कर से आरंभ होता है। इसके बाद दक्षिण-पूर्व में सूर्य, दक्षिण में अर्क तथा नैर्ऋत्य में अर्यमन् का उल्लेख मिलता है। पश्चिम के लिए दोनों पाठ अलग-अलग पद देते हैं: मत्स्यपुराण में "वेदधाम्ने" और भविष्यपुराण में "वसुधात्रे"। पहला नाम वेदों के अधिष्ठान की ओर संकेत करता है, जबकि दूसरे में पृथ्वी के धारक का भाव ग्रहण किया जा सकता है। पूजा की दिशा समान रहते हुए संबोधन बदलना पाठालोचना के लिए महत्त्वपूर्ण है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक ६–७; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ५–७)।

आरंभिक श्लोकों में भी अर्थपूर्ण शब्दभेद है। मत्स्यपुराण के १९५४-आधारित पाठ में "रम्यां" विशेषण मिलता है, जबकि भविष्यपुराण के उत्तरपर्व के चालीसवें अध्याय में "पुण्यां" आया है। पहले पद में व्रत का रमणीय स्वरूप और दूसरे में पुण्यदायिनी विशेषता उभरती है। इसे निश्चित ऐतिहासिक पाठ-परिवर्तन मानने से पहले अन्य मुद्रित संस्करणों का मिलान अपेक्षित है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक १; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक १)।

१०. प्रार्थना में संसार-सागर और संसार-कर्दम

सूर्य से की गई प्रार्थना में संसार से मुक्ति की भावना दोनों ग्रंथों में समान है, लेकिन उसका रूपक बदल जाता है। मत्स्यपुराण के एक पाठ का पद "संसारभयसागरात्" है; भविष्यपुराण में "संसारकर्दमात्" मिलता है। पहले पद में भय उत्पन्न करने वाले सागर से पार लगाने की याचना है। दूसरे में कीचड़ से निकालने का बिंब प्रमुख है। अर्थ की दिशा एक है, फिर भी पाठ की दृश्य कल्पना बदलती है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक १२; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ११)।

संसार से उद्धार की दोनों प्रार्थनाएँ सूर्य से सहायता की याचना करती हैं, लेकिन "भयसागर" और "कर्दम" के बिंब अलग हैं। मत्स्यपुराण का पाठ भयावह सागर से पार उतारने पर और भविष्यपुराण का पाठ संसाररूपी कीचड़ से निकालने पर बल देता है। इन शब्दों के आधार पर किसी पाठ की प्राचीनता निर्धारित नहीं की जा सकती (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक १२; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ११)।

११. फलश्रुति, पुनरुक्ति और अतिरिक्त समापन

दोनों पुराण व्रत के फल में पापक्षय, दिव्यलोक में सुख और पाठ-श्रवण के पुण्य का वर्णन करते हैं। इन्हें पुराणीय फलश्रुति की भाषा में समझना चाहिए। फलश्रुति अनुष्ठान की धार्मिक स्वीकृति और उसके प्रति आस्था को बल देती है; इसका उद्देश्य आधुनिक प्रयोगात्मक परीक्षण के लिए मापने योग्य परिणाम देना नहीं है। इस भेद से पाठ का सांस्कृतिक महत्त्व स्पष्ट रहता है और शोध की पद्धति भी अनुशासित बनी रहती है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक १३–१५; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक १२–१५)।

दोनों प्रकरणों में संसार के अंधकार और दीपक की उपमा आती है। फिर भी फलवचन का विस्तार और उसका बल हर जगह एक जैसा नहीं है। भविष्यपुराण में संसाररूपी रात्रि से बचने का भाव अधिक स्पष्ट है और अध्याय के अंतिम श्लोक में षष्ठी-उपवास एवं भास्करपूजन की विशेष प्रशंसा की

गई है। मत्स्यपुराण के संबंधित अध्याय का समापन इस रूप में नहीं होता। इससे दोनों पाठों की समापन-शैली के बीच एक प्रत्यक्ष अंतर दिखाई देता है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक १४–१५; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक १३–१५)।

१२. दान, संयम और गृहस्थ धर्म

व्रत के कर्मकाण्ड में दान और भोजन का स्थान उपवास जितना ही व्यवस्थित है। "वित्तशाठ्यविवर्जितः" जैसी अभिव्यक्ति व्रती को उपलब्ध साधनों के प्रति कृपणता न बरतने की सीख देती है। वहीं "विभवतः" के अनुसार गोदान का निर्देश आर्थिक सामर्थ्य का भी ध्यान रखता है। इन पदों को साथ पढ़ने पर दान की धार्मिक अपेक्षा और दानकर्ता की स्थिति के बीच तनाव समझ में आता है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक १०–११; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ९–१०)।

दान का यह विधान सामाजिक रूप से तटस्थ नहीं है। वेदज्ञ ब्राह्मण को वस्तुएँ सौंपने का निर्देश उस समय के धार्मिक पदक्रम को भी सामने लाता है। इसी क्रम में मौन, पूर्वाभिमुख बैठना तथा भोजन में तेल-नमक का त्याग शरीर और वाणी के अनुशासन की मांग करते हैं। वर्षभर का मासिक आवर्तन इस अनुशासन को एक दिन के अनुष्ठान से आगे बढ़ाता है (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९, श्लोक ८–११; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०, श्लोक ८–१०)।

१३. पाठ-सम्बन्ध की संभावनाएँ और आलोचनात्मक सावधानी

विधियों में इतने स्थलों पर साम्य होने से किसी साझा परंपरा की संभावना प्रबल होती है। फिर भी समान पाठ का एक ही कारण मान लेना जल्दबाजी होगी। संभव है कि दोनों प्रकरण किसी पुराने व्रत-विधान से संबंधित हों। किसी बाद के संकलन में समान सूत्र ग्रहण किए गए हों, यह भी संभव है। इनमें से किस दिशा में पाठ का प्रसार हुआ, इसे वर्तमान साक्ष्य से निश्चित नहीं किया जा सकता।

इस प्रश्न पर आगे कार्य करने वाले शोधार्थी को दोनों ग्रंथों के अनेक मुद्रित संस्करणों के साथ उपलब्ध पाण्डुलिपियाँ भी देखनी चाहिए। प्रत्येक पाठ की लिपि, प्रकाशन-सूचना, पाठभेद और संपादन-नीति का लेखा रखना आवश्यक होगा। विशेष ध्यान "रम्यां/पुण्यां", "वेदधाम्ने/वसुधात्रे" तथा "संसारभयसागरात्/संसारकर्दमात्" पर दिया जा सकता है। समापनश्लोक का स्थान और उपस्थिति भी तुलनीय है। तब अधिक ठोस पाठ-इतिहास लिखना संभव होगा।

१४. संस्कृत साहित्य-अध्ययन में अनुसंधान की उपयोगिता

इस प्रकरण के अध्ययन से संस्कृत शोध की एक सरल किंतु आवश्यक सीख मिलती है: व्रत का शीर्षक पूरे विधान का स्थानापन्न नहीं है। "षष्ठी" या "सप्तमी" सुनते ही प्रधान तिथि तय कर देने से पहले यह देखना चाहिए कि तैयारी, उपवास, पूजा और आवर्तन कब होते हैं। इसी प्रकार अनुष्ठान का सामान्य अर्थ समान होने पर भी एक शब्द या विशेषण का अंतर धार्मिक संबोधन की दिशा बदल सकता है।

आगे के अनुसंधान के लिए दोनों अध्यायों की तिथिवार और पदवार तुलना उपयोगी आधार बन सकती है। डिजिटल पाठों से आरंभिक सामग्री जल्दी उपलब्ध हो जाती है, किंतु उनमें टंकण, श्लोक-विभाजन अथवा लिप्यंतरण की त्रुटियाँ भी संभव हैं। इसलिए जहाँ निर्णय एक शब्द पर निर्भर हो, वहाँ मुद्रित संस्करण या पाण्डुलिपि की सहायता आवश्यक है। शोधपत्र में अध्याय और श्लोक-संदर्भ यथासंभव स्पष्ट रखे जाने चाहिए।

१५. निष्कर्ष

मत्स्यपुराण की मन्दारसप्तमी और भविष्यपुराण की मन्दारषष्ठी को साथ पढ़ने से उनके अनुष्ठानिक संबंध की तस्वीर स्पष्ट होती है। पंचमी का अल्पाहार, षष्ठी का उपवास, अगले चरण में सूर्यपूजन, मन्दार-पुष्प, तिल से निर्मित अष्टदल कमल, प्रतिमा, ब्राह्मण-भोजन तथा दान दोनों में मिलते हैं। "सप्तम्यां मासि मासि च" द्वारा मासिक सप्तमी-विधान की समानता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस कारण केवल नामभेद के आधार पर दोनों को पूरी तरह अलग व्रत नहीं कहा जा सकता (मत्स्यपुराणम्, १९५४, अध्याय ७९; विजडम लाइब्रेरी, २०२४, उत्तरपर्व, अध्याय ४०)।

इसके साथ पाठ के छोटे अंतर भी अपनी जगह महत्त्व रखते हैं। आरंभ का नाम, पश्चिम दिशा में सूर्य का संबोधन, संसार से उद्धार की प्रार्थना का रूपक और फलश्रुति का विस्तार भिन्न हैं। इसलिए दोनों अध्यायों को शब्दशः एक समान घोषित करना भी उचित नहीं। उपलब्ध सामग्री साझा व्रतपरंपरा की संभावना दिखाती है, पर पाठ के ऐतिहासिक संबंध का अंतिम निर्णय अभी शेष है। यही सावधानी इस तुलनात्मक अध्ययन की प्रमुख सीमा और आगे के शोध की दिशा है।

संदर्भ सूची

गोस्वामी, मिताली. (२०१८). पुराणों में सूर्योपासना पर वैदिक प्रभाव: एक अध्ययन [पीएच.डी. शोधप्रबंध; मूल अंग्रेजी शीर्षक का हिंदी रूपांतर]. गौहाटी विश्वविद्यालय. https://www.wisdomlib.org/hinduism/essay/sun-worship-in-the-puranas/d/doc626760.html

मत्स्यपुराणम्. (१९५४). मन्दारसप्तमीव्रत (अध्याय ७९) [चौखम्बा विद्याभवन संस्करण पर आधारित संस्कृत डिजिटल पाठ]. चौखम्बा विद्याभवन. https://library.livingbliss.org/puranas/matsya/79

विजडम लाइब्रेरी. (२०२४, ३ फरवरी). भविष्यपुराणम्: उत्तरपर्व, अध्याय ४० [संस्कृत डिजिटल पाठ; वेबसाइट के अद्यतन वर्ष के अनुसार]. https://www.wisdomlib.org/hinduism/book/bhavishya-purana-sanskrit/d/doc1274596.html